वर्षा आधारित कृषि हेतु उपयोगी जल बचत तकनीक व जन भागीदारी

संतराम यादव

केंद्रीय बारानी कृषि अनुसंधान संस्थान, संतोषनगर, हैदराबाद

सारांश

देश में अधिकांश कृषि योग्य भूमि वर्षा पर निर्भर करती है। वे क्षेत्र जहां 30 प्रतिशत से कम सिंचित क्षेत्रफल हैं, वर्षा आधारित क्षेत्रों में आंके जाते हैं। इन क्षेत्रों में कृषि उत्पादन पूर्ण रूप से मानसूनी एवं गैर मानसूनी वर्षा पर निर्भर करता है। अक्सर ये क्षेत्र सूखे से ग्रसित होते हैं तथा प्रत्येक तीन वर्षों में अक्सर एक बार सूखा पड़ता है। वर्षा आधारित कृषि क्षेत्र देश के कुल कृषि क्षेत्रफल के लगभग 60 से 65 प्रतिशत भूभाग में फैला हुआ है। वर्षा पर निर्भर खेती में हमेशा अनिश्चितता बनी रहती है क्योंकि वर्षा की तीव्रता तथा मात्रा पर मनुष्य का कोई वश नहीं चलता है। प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से इन क्षेत्रों में देश में पाई जाने वाले सभी मृदाएं (लाल, काली, जलोढ़ नवीन जलोढ़ तलछटी, मिश्रित मृदाएं आदि) विद्यमान है। वर्तमान में ये क्षेत्र देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इन क्षेत्रों के अंतर्गत लगभग 48 प्रतिशत खाद्यान फसल क्षेत्र एवं लगभग 68 प्रतिशत अखाद्यान्न फसल क्षेत्र आते हैं। वर्षा आधारित कृषकों की आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए ऐसी विधियों का उपयोग करना आवश्यक होगा जो कम खर्चीली तथा आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद हों। वर्षा पर आधारित खेती के लिए तकनीकी रूप से जल बचत की विभिन्न विधियों का सुनियोजित उपयोग करना अत्यावश्यक होगा। कृषि वैज्ञानिकों द्वारा विकसित की गई उन्नत तकनीकियों को उचित समय पर किसानों तक पहुंचाना होगा। इन क्षेत्रों के किसानों हेतु जल बचत योजनाओं को ओर अधिक कारगर बनाकर जनभागीदारी सुनिश्चित करने की नितांत आवश्यकता है। जल की कमी, भूमिगत जल संसाधन का अति विदोहन, धरातलीय जल का उचित प्रयोग न कर पाना, निरंतर कृषि भूमि का विस्तार होना, शहरीकरण एवं औद्योगीकरण, जल का अनावश्यक उपयोग, वर्षाजल संचयन का उचित प्रबंधन न करना, जलाशयों एवं जल संग्रह क्षेत्रों की कमी, एवं जलशोधन संयंत्रों की कमी, संग्रहित जल का विवेकपूर्ण एवं तार्किक रूप से प्रबंधन न होना आदि जल बचत की अनेकानेक समस्याएं हैं। जल बचत तकनीकें अपनाकर उन्हें उपाय के रूप में प्रभावी ढंग से लागू करके, जल–संसाधनों के प्रबंधन हेतु सरकारी प्रयासों को अपनाकर, जल संचयन और प्रबंधन प्रणालियों का अनुगामी पालन करते हुए तथा वैज्ञानिकों द्वारा विभिन्न स्तरों पर दिए गए सुझावों को अपनाने से वर्षा आधारित क्षेत्रों में किसानों की आय में बढ़त हासिल की जा सकती है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि वर्षा आधारित क्षेत्रों के किसानों को जल बचत की उचित तकनीकों से निरंतर अवगत कराते रहना होगा परंतु जन सहभागिता की भी नितांत आश्यकता सदैव बनी रहेगी। जब तक जनता जागृत नहीं होगी, प्रकृति द्वारा प्रदत्त यह उपहार यूं ही व्यर्थ होता रहेगा।

Abstract

Most of the arable land in the country depends on rainfall. Areas with less than 30 percent irrigated area are counted in rainfed areas. Agricultural production in these areas depends entirely on monsoon and non-monsoon rainfall. Often these areas are prone to drought and often drought occurs once every three years. The rainfed agricultural area is spread over about 60 to 65 percent of the total agricultural area of the country. There is always uncertainty in rainfed farming because man has no control over the intensity and quantity of rainfall. In terms of natural resources, all the soil (red, black, alluvial alluvial sediments, mixed soils, etc.) found in the country exist in these areas. Presently these regions are playing an important role in the economic development of the country. These areas cover about 48 percent of the food crop area and about 68 percent of the non-food crop area. Keeping in mind the economic condition of rainfed farmers, it will be necessary to use such methods which are less expensive and economically beneficial. Technically planned use of various methods of water saving will be necessary for rainfed farming. Advanced techniques developed by agricultural scientists will have to be delivered to farmers at the appropriate time. There is an urgent need to ensure public participation by making water saving schemes more effective for the farmers of these areas. Water scarcity, over-exploitation of ground water resources, inadequate use of surface water, continuous expansion of agricultural land, urbanization and industrialization, unnecessary use of water, proper management of rainwater harvesting, reservoirs and water storage areas Shortage, and lack of water treatment plants, prudent and rational management of stored water, etc. are many problems of water saving. By adopting water saving techniques and implementing them effectively as a measure, adopting government efforts to manage water resources, following water harvesting and management systems and adopting the suggestions given

by scientists at different levels Increase in income of farmers can be achieved in the regions. There is no doubt that farmers of rainfed areas will have to be constantly informed about the appropriate techniques of water saving, but there will always be an urgent need for public participation. Until the public is awakened, this gift given by nature will continue to be wasted.

परिचय

हमारे देश की आर्थिक उन्नति में कृषि का बहुमूल्य योगदान है। देश में अधिकांश कृषि योग्य भूमि वर्षा पर निर्भर करती है। वर्षा पर निर्भर खेती में हमेशा अनिश्चितता बनी रहती है क्योंकि वर्षा की तीव्रता तथा मात्रा पर मनुष्य का कोई वश नहीं चलता है। भाकृअनुप–केंद्रीय बारानी कृषि अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद, तेलंगाना के अनुसार वे क्षेत्र जहां 30 प्रतिशत से कम सिंचित क्षेत्रफल हैं, वर्षा आधारित क्षेत्रों में आंके जाते हैं। इन क्षेत्रों में कृषि उत्पादन पूर्ण रूप से मानसूनी एवं गैर मानसूनी वर्षा पर निर्भर करता है। अक्सर ये क्षेत्र सूखे से ग्रसित होते हैं तथा प्रत्येक तीन वर्षों में अक्सर एक बार सूखा पड़ता है। वर्षा आधारित कृषि क्षेत्र देश के कुल कृषि क्षेत्रफल के लगभग 60 से 65 प्रतिशत भूभाग में फैला हुआ है। ये क्षेत्र महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, राजस्थान, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, उत्तर प्रदेश, गुजरात, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु आदि राज्यों के साथ देश में लगभग पंद्रह राज्यों में फ़ैले हुए हैं। प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से इन क्षेत्रों में देश में पाई जाने वाले सभी मृदाएं (लाल, काली, जलोढ़ नवीन जलोढ़ तलछटी, मिश्रित मृदाएँ आदि) विद्यमान है। पश्चिमी एवं पूर्वी राजस्थान, गुजरात, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और तमिलनाडु राज्य इससे सबसे ज्यादा प्रभावित हैं। वर्तमान में ये क्षेत्र देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इन क्षेत्रों के अंतर्गत लगभग 48 प्रतिशत खाद्यान फसल क्षेत्र एवं लगभग 68 प्रतिशत अखाद्यान्न फसल क्षेत्र आते हैं। इन क्षेत्रों में ज्वार, बाजरा, मक्का, दलहन, मूंगफली, कपास और सोयाबीन की कुल बिजाई क्षेत्रफल का क्रमशः 92, 94, 80, 83, 73 और 99 प्रतिशत हिस्सा बोया जाता है। यह सर्वविदित है कि कृषि की समृद्धि मृदा की गुणवत्ता एवं जल की उपलब्धता तथा इन दोनों के विवेकपूर्ण उपयोग पर निर्भर करती है। इसके अलावा एकीकृत फार्म प्रबंधन के सभी महत्वपूर्ण घटकों (फसल, पशु, चारा, मछली, बागवानी, कृषि वानिकी, रोग एवं कीट, कृषि यांत्रिकीकरण, विपणन तंत्र प्रबंधन इत्यादि) का समावेश करना भी अति आवश्यक है। वर्षा आधारित कृषकों की आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए ऐसी विधियों का उपयोग करना आवश्यक होगा जो कम खर्चीली तथा आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद हों। वर्षा ऋतु के आगमन से पूर्व ही कुछ व्यवस्थाएं करनी पड़ेगी जिससे वर्षा से होने वाले भूक्षरण को कम करके वर्षा जल का अधिकतम उपयोग खेती में किया जा सके। वर्षा पर आधारित खेती के लिए तकनीकी रूप से जल बचत की विभिन्न विधियों का सुनियोजित उपयोग करना अत्यावश्यक होगा।

इस धरातल पर भूमि एवं जल प्रकृति द्वारा मनुष्य को दी गई दो अनमोल संपदाएं हैं। देश का किसान इन दोनों ही संपदाओं का कृषि हेतु उपयोग प्राचीनकाल से करता आया है। वर्षाजल का संचयन वर्षा आधारित कृषि में सिंचाई हेतु बहुलाभकारी सिद्ध होता है। वर्षा पर आधारित खेती को अधिक सफल बनाने के लिए वर्षा की एक–एक बूंद का उपयोग अत्यावश्यक है चाहे वह नमी के रूप में भूमि में निहित रहे या वर्षा जल को किसी उचित स्थान पर संचित करके किया जाए जिससे आवश्यकता पड़ने पर सिंचाई की जा सके। वर्तमान में वर्षा आधारित क्षेत्र विभिन्न प्रकार की समस्याओं से ग्रस्त है। इनमें मुख्यतः नैसर्गिक/प्राकृतिक समस्याओं, ढलान वाली भूमि सतह, मृदा में फसल पोषक तत्वों की कमी, मृदा जैविक कार्बन अंश का कम होना, कमजोर मृदा संरचना, अधिक तापमान इत्यादि का उल्लेख किया जा सकता है। इनके अतिरिक्त सामाजिक समस्याएं (गरीबी, अशिक्षा, जनसंख्या, जोत विखंडीकरण इत्यादि), आर्थिक समस्याएं (कम निवेश क्षमता, कृषि ऋण की अनुपलाब्धता, समुचित बीमाकरण जैसी सुविधा की कमी, कृषि विपणन इत्यादि), और अन्य समस्याएं (अपर्याप्त भंडारण सुविधा, कृषि आगतों की उपलब्धता में कमी, परिवहन सुविधा की कमी, मंडी की अनुपलब्धता) इन क्षेत्रों की कृषि को और विकट बना देती है। उपरोक्त समस्याओं के अतिरिक्त कृषि वैज्ञानिकों द्वारा विकसित की गई उन्नत तकनीकियों का उचित समय पर किसानों तक न पहुंच पाना भी इन क्षेत्रों में कृषि उत्पादन की गिरावट का प्रमुख कारण है। हालांकि, सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों द्वारा वर्षा आधारित कृषकों की समस्याओं के निदान हेतु कई कारगर प्रयास किए जा रहे हैं, फिर भी, इन क्षेत्रों के किसानों हेतु जल बचत योजनाओं को ओर अधिक कारगर बनाकर जनभागीदारी सुनिश्चित करने की नितांत आवश्यकता है।

जल की कमी, भूमिगत जल संसाधन का अति विदोहन, धरातलीय जल का उचित प्रयोग न कर पाना, निरंतर कृषि भूमि का विस्तार होना, शहरीकरण एवं औद्योगीकरण, जल का अनावश्यक उपयोग, वर्षाजल संचयन का उचित प्रबंधन न करना, जलाशयों एवं जल संग्रह क्षेत्रों की कमी, एवं जलशोधन संयंत्रों की कमी, संग्रहित जल का विवेकपूर्ण एवं तार्किक रूप से प्रबंधन न होना आदि जल बचत की अनेकानेक समस्याएं हैं। छोटी खेत जोत आकार, कई खेत जोतों पर प्राकृतिक ढलान न होना, एवं लागत की समस्या, किसान द्वारा ज्ञान के अभाव में लंबी अवधि की फसलें लगाने से अधिक जल की आवश्यकता पड़ना आदि बाधाओं से देश के किसानों को गुजरना पड़ता है जिसके लिए ये सुझाव कारगर सिद्ध हो सकते हैं–बड़ी खेत जोतों के लिए खेत तालाब तकनीक एवं सामूहिक भूमि पर समुदायिक तालाब तकनीक, क्षेत्र विशेष के अनुसार कम अवधि तथा अधिक लाभदायक फसलों (सब्जियां, औषधियां, घास इत्यादि) की प्रजातियां लगाना। क्षेत्र विशेष में विद्यमान कृषि विश्वविद्यालय से समय–समय पर इनकी जानकारी ग्रहण करना। भाकृअनुप–केंद्रीय बारानी कृषि अनुसंधान संस्थान,

हैदराबाद द्वारा किए गए अनुसंधान दर्शाते हैं कि संग्रहित जल से विभिन्न प्रकार की सब्जियां उगाई जा सकती है तथा फसल मध्य सूखे के दौरान जीवन रक्षा सिंचाई करके फसलों को बचाया जा सकता है। इससे उपज एवं आय में बढ़ोतरी होती है। कम अवधि एवं अधिक सूखा सहन करने वाली फसलों से किसान की आय में वृद्धि भी पाई गई है। अतः ये तकनीकें वर्षा आधारित कृषकों हेतु प्रभावकारी सिद्ध हुई हैं।

जल बचत तकनीकें

इसमें कोई दो राय नहीं है कि जल प्रकृति द्वारा प्रदत्त असीमित भंडार है। वर्षा आधारित कृषि लगभग पूरी तरह वर्षा पर निर्भर है। इसलिए जरूरी है कि संतुलित और समुचित रूप से मानसून की कृपा बनी रहे। वर्षा आधारित कृषकों हेतु जल की पर्याप्तता एवं शुद्धता बनाए रखने हेतु इसका उचित प्रबंधन आवश्यक है। हमारे पास जहां एक ओर सतही जल के रूप में तालाब, नदी नाले एवं जलाशय उपलब्ध हैं तो दूसरी ओर भूमिगत जल के रूप में कुओं और नलकूपों के माध्यम से इसका दोहन किया जाता है। वर्तमान में उपलब्ध जल का उचित उपयोग नदियों के प्रवाह मार्ग में जल रोककर वर्षाजल को ढालों की तीव्रता के अनुसार बांध बनाकर एवं जलाशयों का निर्माण कर किया जा रहा है। वर्षा जल को भूमि की सतह पर बहता वर्षा जल (अपवाह), मकानों की छत से गिरता वर्षा जल तथा प्राकृतिक स्रोतों से बहता पानी के रूप में देखा जा सकता है। आजकल भवन या मकान की छतें आरसीसी या आरबीसी तकनीक से बनाई जाती हैं, जिससे छत पर वर्षा जल का प्रभाव न पड़े। अब ऊपरी छत से वर्षाजल के संरक्षण हेतु भवन की छत से पाइप लगा दिया जाता है। भूमि पर पाइप द्वारा छत वाले पाइप को जोड़ दिया जाता है। इस प्रकार से पाइप का एक किनारा वर्षाजल प्राप्त करने के लिए छत से जुड़ा होता है, वहीं उसका दूसरा सिरा भवन से कुछ आगे एक कुएं से जुड़ा होता है। यदि कुआं न हो तो पिच गड्ढा खोदा जाता है या पुनर्भरण खाई खोद दी जाती है। इस तकनीक द्वारा वर्षा का जल भूमि के अंदर पहुंचा दिया जाता है, इससे भूमिगत जलस्तर को बढ़ाया जा सकता है।

वर्षा पर आधारित खेती को अधिक सफल बनाने के लिए वर्षा की एक–एक बूंद का उपयोग अत्यावश्यक है चाहे वह नमी के रूप में भूमि में निहित रहे या वर्षा जल को किसी उचित स्थान पर संचित करके किया जाए। इसके लिए कुछ महत्वपूर्ण तकनीकियां इस प्रकार हैं।

ड्रिप या टपक प्रणाली वर्षा आधारित कृषकों हेतु सिंचाई की एक उन्नत विधि है, जिसके प्रयोग से सिंचाई जल की पर्याप्त बचत की जा सकती है। यह प्रणाली फसल को मुख्यश पंक्ति, उप पंक्ति तथा पार्श्व पंक्ति के तंत्र के उनकी लंबाईयों के अंतराल के साथ उत्सर्जन बिंदु का उपयोग करके पानी वितरित करती है। इस विधि को मृदा के प्रकार, खेत के ढाल, जल के स्त्रोत और किसान की दक्षता के अनुसार अधिकतर फसलों के लिए अपनाया जा सकता है। प्रत्येक ड्रिपर/उत्सार्जक, मुहाना संयत, पानी व पोषक तत्वों तथा अन्यक वृद्धि के लिये आवश्यक पदार्थों की विधिपूर्वक नियंत्रित कर एक समान निर्धारित मात्रा, सीधे पौधे की जड़ों में आपूर्ति करता है जिससे सिंचाई दक्षता लगभग 80–90 प्रतिशत होती है। पानी की बचत और उत्पादन की अधिक पैदावार के लिहाज से बौछारी सिंचाई प्रणाली अति उपयोगी और वैज्ञानिक तरीका मानी गई है। किसानों में सूक्ष्म सिंचाई के प्रति काफी उत्साह देखा गया है। फसलों की पैदावार बढ़ने के साथ–साथ इस विधि से उपज की उच्च गुणवत्ता, रसायन एवं उर्वरकों का दक्ष उपयोग, जल के विक्षालन एवं अप्रवाह में कमी, खरपतवारों में कमी और जल की बचत सुनिश्चित की जा सकती है। बौछारी या स्प्रिंकलर विधि से सिंचाई में पानी को छिड़काव के रूप में दिया जाता है। जिससे पानी पौधों पर वर्षा की बूंदों जैसी पड़ती हैं। स्प्रिंकलर द्वारा सिंचाई या स्प्रिंकलर इरिगेशन सिस्टम में जल दबाव के साथ पाइपों में प्रवाहित होता है और बारिश की बूंदों की तरह खेत में स्प्रे होता है। इसे 'ओवर हेड' सिंचाई कहते हैं। आजकल बाजार में पोर्टेबल, सेमी–पोर्टेबल, सेमी–पर्मानेंट और पर्मानेंट जैसे स्प्रिंकलर सिस्टम प्रचलित हैं। टपक सिंचाई, बूंद बूंद सिंचाई या ड्रिप इरिगेशन से पानी और खाद की बचत होती है। इस विधि में पानी को पौधों की जड़ों पर बूंद–बूंद करके टपकाया जाता है। इस कार्य के लिए वाल्व, पाइप, नलियों तथा एमिटर का नेटवर्क लगाना पड़ता है। जलग्रहण या वाटरशेड भूमि पर एक जल निकास क्षेत्र है, जो वर्षा के बाद बहने वाले जल को किसी नदी, झील, बड़ी धारा अथवा समुद्र में मिलाता है। इस उपाय के अंतर्गत कृषि भूमि के लिए ही नहीं, अपितु भूमि जल संरक्षण, अनुपजाऊ एवं बेकार भूमि का विकास, वनरोपण और वर्षाकाल के जल का संचयन कार्य किया जा सकता है। पर्वतीय क्षेत्रों में वर्षा जल संचयन हेतु पॉलिथीन युक्त टैंकों का निर्माण किया जा सकता है। इन पॉलिथीन युक्त टैंकों की बनावट, सुरक्षा तथा रखरखाव हेतु टैंक की क्षमता की आंकलन जल की आवश्यकता तथा उपलब्धता के आधार पर ठीक प्रकार से होना चाहिए। पॉलिथीन की मोटाई 0.25 मिलिमीटर से कम नहीं होनी चाहिए और न ही उसमें कोई छेद होना चाहिए। पॉलिथीन के ऊपर और नीचे कीचड़ का लेप ठीक प्रकार से किया जाना चाहिए। पॉलिथीन को कभी भी धूप में खुला नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि धूप के कारण पॉलिथीन फटकर टूट जाती हैं। इस प्रकार के गड्ढ़ों में जानवर या मनुष्य को नहीं जाने देना चाहिए। पानी निकासी हेतु केवल पाइप का उपयोग करें, जिससे साइफन विधि से निचले खेतों में गुरूत्व बल से सिंचाई की जा सके। किसान की फसलों की जल आवश्यकता का निर्धारण फसल के प्रकार तथा उसके लिए सिंचाई की मात्रा व संख्या पर निर्भर करता है। पर्वतीय स्थलों पर सामान्यतः आयताकार या वर्गाकार रूप में गड्ढ़ा खोदना पड़ेगा, जिसकी दीवारों का ढाल लगभग 450 कोण या 1:1 ढाल पर होनी चाहिए क्योंकि इस ढाल पर मिट्टी के कण स्वतः रूक जाते हैं अर्थात जलाशय का आकार आयताकार या वर्गाकार आधार वाले पिरामिड को काटकर उल्टा रखने जैसा होगा। गड्ढ़ा खोदने से पहले गड्ढे की लंबाई व

चौड़ाई का आंकलन करना होगा। गड्ढ़े की गहराई 1 से 1.5 मीटर तक ही सीमित रखते है। इसके पश्चात खोदी गई मिट्टी में भूसा या चीड़ की सूखी पत्तियों को काटकर कीचड़ बनाकर गड्ढे में सब तरफ लगभग 4 इंच मोटी परत लगा देते है। फिर 0.25 मिलीमीटर मोटी काली पॉलिथीन चादर को गड्ढ़े के आकार के अनुसार काटकर बिछा देते हैं। पॉलिथीन के किनारों को गड्ढ़े के किनारों पर ठीक प्रकार मोड़कर बिछा देते हैं। इसके इसके पश्चात् पॉलिथीन के ऊपर भी कीचड़ की लगभग 6 इंच मोटी पर्त चारों ओर लगा देते हैं जिससे पॉलिथीन को धूप न लग सके। यदि वर्षा का पानी सतही अपवाह के रूप में एकत्र किया जाता है तो मुख्य गड्ढ़े से पहले एक छोटा गड्ढ़ा भी बना देते है जिससे अपवाह के साथ आई मिट्टी या कूड़ा–करकट मुख्य गड्ढ़े में न जाने पाए। सिंचाई हेतु पानी की निकासी लगभग एक इंच व्यास के पाइप से साइफन विधि द्वारा की जानी चाहिए जिससे पानी निकलते समय टैंक सुरक्षित रहे।

जल बचत

राष्ट्रीय विकास में जल की महत्ता को देखते हुए भारत सरकार के रणनीतिकारों ने 'जल बचत' को अपनी सर्वोच्च प्राथमिकताओं में रखकर पूरे देश में कारगर जन–जागरण अभियान चलाने की आवश्यकता पर बल दिया। 'जल बचत' के कुछ परंपरागत उपाय तो बेहद सरल और कारगर रहे हैं। जल का जीवन से गहरा संबंध है। पृथ्वी पर उपलब्ध जल का जितना प्रयोग हो रहा है, उससे अधिक जल प्रदूषित हो रहा है और व्यर्थ बहकर बर्बाद हो रहा है। इसलिए आज जल बचत की महती आवश्यकता है।

जल–संसाधनों के प्रबंधन हेतु सरकारी प्रयास

भारत सरकार के केंद्रीय जल आयोग द्वारा स्थापित जल–संसाधन प्रबंधन एवं प्रशिक्षण योजना के अंतर्गत सिंचाई प्रणालियों को सुधारना, सिंचाई संस्थाओं को कुशल बनाना तथा अनुरक्षण करना शामिल है। विश्व बैंक की सहायता से 1986 में कृषि क्षेत्र को विकसित करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय जल प्रबंधन परियोजना चलाई गई। विभिन्न कार्यशालाओं और सेमिनारों का आयोजन तथा श्रम इंजीनियर के आदान–प्रदान जैसे कार्यक्रमों द्वारा प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण किया जाता है। देश में विशेषकर पूर्वी क्षेत्रों में अधोभौमिक जल के उपयोग के क्षेत्र में अधिक कार्य नहीं हुआ था। वहां नलकूपों का निर्माण करनोपरांत उन्हें क्रियाशील बनाने के लिए अधोभौमिक जल संसाधनों के लिए केंद्रीय योजना तैयार की गई। अतीत में नवीन जल नीति लागू की गई। तदुपरांत जल बचत हेतु सरकारी व गैर सरकारी स्तर पर अनेकानेक प्रयास किए जा रहे हैं जो तभी कारगर सिद्ध होंगे, जब जनता इस नेक कार्य हेतु स्वयं जागृत होगी।

जल संचयन और प्रबंधन प्रणालियां

ऐसे पर्वतीय क्षेत्र जहां ढाल अधिक नहीं है वहां मंटुआर बंध या पुश्ते लगाए जा सकते हैं। किसान आपसी सहयोग से पुश्ता लगाएं तो उनके खेत में जब पानी भर जाएगा तो अतिरिक्त पानी नीचे के खेत में जाकर भरने लगेगा जिससे दूसरा किसान भी लाभान्वित होगा। भूमिगत बांधों के निर्माण से गैर–मानसून महीनों में भूमिगत या नाली के जल को नदी के चैनलों में जाने से रोका जाए ताकि नदी का जल प्रदूषित होने से बच सके। 10 मीटर तक गहरे छोटे और बड़े पोखर और तालाबों का निर्माण किया जाना चाहिए तथा जहां वर्षा कम होती है वहां ऐसे आधे हेक्टेयर क्षेत्रफल के तालाबों में जल ग्रहण की क्षमता 50 हेक्टेयर तक होनी चाहिए। दूर–दूर तक फैले क्षेत्रों में विशेष प्रकार के तालाब बनाए जा सकते हैं, जिनमें पानी का रिसाव होता है, इन्हें सतही परिस्रवण ताल कहते हैं। यदि क्षेत्र के कुएं का जलस्तर घट रहा है तो पंप की सहायता से नदी का पानी कुओं में भर दिया जाए। जहां बड़ी नदियां हैं और प्रतिवर्ष बाढ़ आती है, ऐसे क्षेत्रों में नदियों की बाढ़ को उन क्षेत्रों में मोड़ देना चाहिए, जिन क्षेत्रों में कुएं और तालाब हों। देश के कृषकों को यह बात समझाई जाए कि जो वर्षा का जल खेतों में भर जाता है, उन्हें खेतों से बाहर बहकर जाने से रोकने का उपाय वे स्वयं करें। गांव अथवा नगर की नालियों को नदी के संपर्क से दूर रखने के लिए लोगों को जागरूक करने की योजना अमल में लाई जानी चाहिए।

वर्षा आधारित क्षेत्रों में किसानों की आय बढ़ाने हेतु प्रभावकारी सुझाव

अनुसंधान, नीतियां एवं कार्यक्रमों का दायरा प्रत्येक किसान के खेत पर केंद्रित करने की आवश्यकता है, क्योंकि इन क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की विविधता विद्यमान है। विकसित की गई कृषि तकनीकों को समय के साथ पुनः परिष्कृत/संशोधित करके पूर्ण पैकेज के रूप में किसानों तक पंहुचाया जाना चाहिए। प्राकृतिक संसाधनों में मृदा एवं जल के समुचित प्रबंधन को सर्वोपरी प्राथमिकता देते हुए, इस दिशा में और कार्य करने की आवश्यकता है। तकनीक के सभी घटकों (बीज, रासायनिक खाद, बिजाई यंत्र, पशुधन की नस्लें, खेत तालाब इत्यादि) को एक साथ किसानों तक पहुंचाया जाए। साथ ही साथ यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि किसानों को उत्पादित माल की उचित कीमत प्राप्त हो। माल की उचित विविधिकरण के साथ कृषि प्रणाली में पशुधन को शामिल करने की जरूरत है। गांव स्तर पर सामुदायिक बीज एवं चारा बैंक, सामुदायिक उपयोग केंद्र, कृषि बीमा, विपणन तंत्र इत्यादि पर नीतियां और क्रियान्वयन के लिए ठोस रणनीति बनाने की आवश्यकता है। वर्तमान में कृषि, ज्ञान आधारित होती जा रही है। अतः ऐसी रणनीति एवं योजनायें बनाने की जरूरत है, जिनसे शिक्षित युवा

इस तरफ आकर्षित हो सकें। कृषि मौसम सलाह को प्रत्येक गांव के स्तर तक पहुंचाने की अति आवश्यकता है। इस दिशा में कृषि विस्तार तंत्र को और मजबूत करने की जरूरत है। साथ ही साथ कृषि विस्तार की नई विधाएं विकसित करने की आवश्यकता है, जिससे उपलब्ध तकनीकों एवं सूचनाओं को सरल भाषा एवं तीव्रता के साथ किसानों तक पहुंचाया जा सके। कृषि आगतों (बीज, रासायनिक खाद, जीवाणु खाद, कृषि यंत्र, रोग एवं कीटनाशक दवाइयां इत्यादी) की सुगम एवं सुलभ उपलब्धता की दिशा में कार्य करने की आवश्यकता है। इन क्षेत्रों में तकनीकी दक्षता हासिल करने के लिए वैज्ञानिकों के बहुआयामी एवं बहु संस्थान दल तैयार कर अनुसंधान का दायरा बढ़ाने की नितांत जरूरत है। यदि समय पर उपरोक्त सुझावों पर कार्रवाई की जाती है तो इससे कृषि प्रणाली में स्थिरता प्रतिस्पर्धा, विपरीत जलवायु से लड़ने की क्षमता के साथ ही उपलब्ध संसाधनों का सरंक्षण एवं समुचित उपयोग भी किया जा सकता है। इस प्रकार इन क्षेत्रों के कृषकों में कृषि आय को दोगुना करने की क्षमता भी विकसित की जा सकती है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि इन क्षेत्रों के किसानों को जल बचत की उचित तकनीकों से निरंतर अवगत कराते रहना होगा। इसके साथ ही साथ जन सहभागिता की भी परमावश्यकता है। जब तक जनता इस नेक काम हेतु जागृत नहीं होगी, प्रकृति द्वारा प्रदत्त यह उपहार यूं ही व्यर्थ होता रहेगा और वर्षा आधारित कृषि से जुड़े हमारे किसान भाईयों को एक–एक बूंद के लिए संघर्ष करते हुए देखना पड़ेगा।

Reference

- CRIDA, Hyderabad literature and other materials/information available on Internet.